अध्याय -42
जैव चिकित्सा तकनीकें
(Bio-Medical Technologies)

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में विभिन्न रोगों की जांच व निदान में कई प्रकार की विकसित तकनीकों का उपयोग किया जाता है। कई रोगों के निदान हेतु रक्त, मूत्र, कफ तथा मल परीक्षण किये जाते हैं ताकि रोग के उचित कारण व प्रकृति का निर्धारण कर उसकी समुचित चिकित्सा की जा सके। पिछले कुछ दशकों में तकनीकी विकास के कारण बीमारी जाँचने के औजारों व उपकरणों में क्रांतिकारी परिवर्तन आये हैं तथा परीक्षणों की विधियों में काफी सुधार हुआ है। रोग परीक्षण सम्बंधी विधियां आज पहले से अधिक सटीक, विश्वसनीय व कम समय में अपेक्षित परिणाम उपलब्ध कराती हैं। प्रस्तुत अध्याय में चिकित्सकीय जाँच में प्रयुक्त कुछ महत्वपूर्ण परीक्षणों तथा उपकरणों के बारे में विवरण दिया गया है।

रक्त की जाँच
(Haematological Examinations)

हम जानते हैं कि रक्त प्राणी शरीर का एक महत्वपूर्ण घटक है जो कि रक्त कणिकाओं व प्लैज्मा से बना होता है। शरीर के समस्त ऊतकों व कोशिकाओं को उपयोगी पदार्थों की उपलब्धता रक्त के माध्यम से ही होती है व रक्त परिवहन द्वारा ही पदार्थों का परिवहन सुनिश्चित होता है। ऊतकों में किसी प्रकार की संरचनात्मक व कार्यिकीय असामान्यता रक्त में भी परिलक्षित होती है। अत: रक्त के परीक्षण द्वारा जीव की शारीरिक व कार्यिकीय अवस्था तथा असामान्यता के बारे में अनुमान लगाया जा सकता है। यही कारण है कि चिकित्सक द्वारा रोगी की जाँच में रक्त सम्बंधी परीक्षण एक आम परीक्षण होता है। यद्यपि रक्त की जांच में परिमापकों (Parameters) की एक लम्बी सूची है परन्तु रक्त सम्बंधी कुछ साधारण परीक्षणों के बारे में ही यहां जानकारी दी जा रही है।

1. रक्त में हीमोग्लोबिन की जांच
(Estimation of Haemoglobin in blood)

रक्त में उपस्थित हीमोग्लोबिन का मापन **हीमोग्लोबिनोमेट्री** (Haemoglobinometry) कहलाता है। यह रक्ताणुओं (RBCs) में पाया जाने वाला एक श्वसन वर्णक है। रासायनिक रुप से यह एक क्रोमोप्रोटीन है जो ऑक्सीजन व CO_2 के परिवहन में उपयोगी है। इस महत्वपूर्ण कार्य हेतु हीमोग्लोबिन की समुचित मात्रा का होना आवश्यक है। यदि किसी कारणवश रक्त में हीमोग्लोबिन की मात्रा सामान्य से कम हो जाये तो व्यक्ति की कार्यक्षमता विपरीत रुप में प्रभावित होती है। सामान्य से कम हीमोग्लोबिन की मात्रा **रक्ताल्पता रोग** (Anaemia) का द्योतक है। हीमोग्लोबिन की सामान्य मात्रा निम्नानुसार होती है-

आयु वर्ग	हीमोग्लोबिन ग्रा./100 मि.ली. रक्त
स्वस्थ वयस्क पुरुष	15.5 ± 2.5
स्वस्थ वयस्क स्त्री	14 ± 2.5
बच्चे (3 माह)	11.5 ± 2.5
बच्चे (3-6 साल)	12 ± 1
बच्चे (10-12 साल)	13 ± 1.5

हीमोग्लोबिन का मापन हीमोग्लोबिनोमीटर (Haemoglobinometer) से किया जाता है। पारम्परिक विधि में **साहली के हीमोग्लोबिनोमीटर** (Sahli's Haemoglobinometer) का इस्तेमाल करते हैं जबकि उन्नत विधि

में **फोटोहीमोग्लोबिनोमीटर** (Photohaemoglobinometer) या **ऑटो ऐनालाइजर** (Autoanalyzer) का उपयोग किया जाता है।

साहली के हीमोग्लोबिनोमीटर में एक मापक नलिका (Graduated tube) होती है तथा एक स्टैण्ड में दो मानक मैचिंग नली लगी होती है। दोनों मानक नलियों के बीच में एक स्थान में मापक नलिका रखी जाती हैं। मापक नलिका में शून्य (2 ग्रा.%) के चिन्ह तक N/10 HCI भर लिया जाता है। अब हीमोग्लोबिन पिपेट में 20 µL (0.02 मि. ली.) रक्त लेकर इसे मापक नलिका में रखे HCI में डाल दिया जाता है। रक्त को HCI के साथ अच्छी तरह मिलाने पर, हीमोग्लोबिन गहरे भूरे रंग के हीमैटिन (Haematin) में बदल जाता है। मापक नलिका को अब मैचिंग नलिकाओं (Comparison tubes) के बीच के स्थान में रखते हैं व उसमें बूंद बूंद आसुत जल मिलाते हुए हिलाते रहते हैं। जब आसुत जल के मिलाने पर मापक नलिका का रंग मानक रंग से मिल जाता है तब मापक नलिका का पाठ्यांक लेकर हीमोग्लोबिन की मात्रा ज्ञात कर लेते हैं।

शरीर में रक्ताल्पता होने के कई कारण हो सकते हैं, जिनमें दुर्घटना में अधिक रक्त स्राव होना, कुपोषण, फॉलिक अम्ल व विटामिन तथा लौह तत्व की कमी एवं आनुवंशिक रोग प्रमुख है।

2. कुल श्वेताणु गणना (Total Leucocyte Count, TLC)

श्वेत रक्ताणु हमारे शरीर में प्रतिरक्षा क्रियाओं के लिये महत्वपूर्ण हैं जो कि शरीर में सिपाही की भाँति काम करती है। इनकी गणना का रोग निदान में विशेष महत्व है। श्वेत रक्ताणु न्यूट्रोफिल्स, बेसोफिल्स, ईओसिनोफिल्स, लिम्फोसाइट्स एवं मोनोसाइट्स प्रकार की होती है। सामान्यत: रक्त में इनकी संख्या 5000-10000 प्रति घन मि.मी. होती है। श्वेत रक्ताणुओं का सामान्य से अधिक होना **श्वेताणु बहुलता** (Leucocytosis) तथा सामान्य से कम होना **श्वेताणुअल्पता** या **श्वेताणुन्यूनता** (Leucopenia) कहलाता है। कुल श्वेताणु गणना (TLC) की विधि निम्न है-

(i) श्वेताणुओं की गणना हेतु न्यूबॉर (Neubaurs) के हीमोसाइटोमीटर (Haemocytometer) का प्रयोग किया जाता है जिसके गणन कक्ष के चारों कोनों पर श्वेताणु गणन कक्ष होते हैं। इस गणन कक्ष को सूक्ष्मदर्शी के नीचे फोकस कर लेते हैं।

(ii) श्वेताणु पिपेट (WBC पिपेट) में 0.5 के अंक तक रक्त ले लिया जाता है।

(iii) पिपेट में ही श्वेताणु तनुकारी विलयन (WBC diluting fluid) 11.0 के चिन्ह तक खींचते हैं। रक्त के साथ द्रव को अच्छी तरह हिलाकर मिला देते हैं।

(iv) न्यूबॉर गणन कक्ष पर कवर स्लिप लगा देते हैं व पिपेट द्वारा तनुकृत रक्त से गणन कक्ष को भर देते हैं। पांच मिनिट तक कोशिकाओं को स्थिर होने देते हैं।

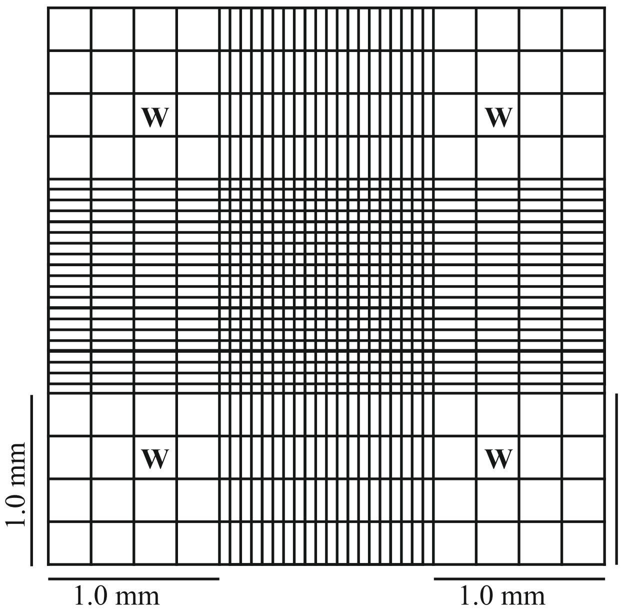

चित्र 42.1 हीमोसाइटोमीटर, गणन कक्ष को प्रदर्शित करते हुये (W= श्वेताणु गणन कक्ष)

(v) चित्र 42.1 में W द्वारा दर्शाये गये चार बड़े वर्गों (कुल 64 छोटे वर्गों) में श्वेताणुओं की गणना कर ली जाती है। श्वेताणुओं की प्रति घन मि.मी. संख्या को ज्ञात करने हेतु निम्न सूत्र काम में लेते हैं-

कुल श्वेताणु = चारों बड़े वर्गों में श्वेताणुओं की संख्या × तनुता × गणन कक्ष की गहराई कारक

प्र.घ.मि.मी. = गिनी हुई श्वेताणुओं की संख्या × 20 × 10 × 0.1

प्रदर्शित करते हुये (W श्वेताणु गणन कक्ष)

कुछ विशिष्ट रोगों में कुल श्वेताणुओं की संख्या में परिवर्तन हो जाता है। उदाहरणार्थ- रक्त कैंसर (Leukemia) में श्वेताणुओं की संख्या कई गुना बढ़ जाती है जबकि टायफॉइड, तपैदिक, खसरा, डेंगू ज्वर, काला-अजर इत्यादि रोगों में संख्या घट जाती है।

3. विभेदक श्वेताणु गणना (Differential Leucocyte Count, DLC)

रक्त की इस जांच में भिन्न-भिन्न प्रकार की श्वेताणुओं का प्रतिशत ज्ञात किया जाता है। यह रक्त परीक्षण कुल श्वेताणु गणना से भी अधिक उपयोगी है क्योंकि विभिन्न रोगों में कुछ विशिष्ट प्रकार की श्वेताणुओं की संख्या में बढ़ोतरी अथवा कमी हो जाती है, अत: यह रोग निदान में महत्वपूर्ण है।

इस परीक्षण में रोगी के रक्त का एक आलेप (Smear) तैयार कर इसे किसी उपयुक्त अभिरंजक जैसे लीश्मैन अभिरंजक (Leishmann

stain) अथवा जीम्सा (Geimsa) अभिरंजक से अभिरंजित किया जाता है। अभिरंजित स्लाइड का प्रेक्षण सूक्ष्मदर्शी द्वारा कर, भिन्न-भिन्न प्रकार के श्वेताणुओं को पहचान कर गणना कर ली जाती है। इसके लिये रक्ताणु गणना मशीन (Blood cell counter) का प्रयोग किया जा सकता है। गणना की गई 100 श्वेताणुओं में भिन्न-भिन्न प्रकार के श्वेताणुओं की प्रतिशत ज्ञात कर लेते हैं।

स्वस्थ मनुष्य के रक्त में भिन्न-भिन्न प्रकार के श्वेताणुओं की सामान्य संख्या निम्नानुसार पायी जाती है-

न्यूट्रोफिल्स	=	40-75%
इओसिनोफिल्स	=	0-6%
बेसोफिल्स	=	0-2%
लिम्फोसाइट्स	=	20-45%
मोनोसाइट्स	=	2-10%

विभेदक श्वेताणु गणना में असामान्यता मिलने पर कुछ विशेष रोगों के होने का संकेत मिलता है जिनकी आगे विशिष्ट जाँच कराकर निदान किया जाना संभव हो सकता है। ऐसी कुछ स्थितियाँ यहाँ दी जा रही हैं-

विभेदक श्वेताणु गणना में असामान्यता की प्रकृति	संभावित रोग का संकेत
(i) न्यूट्रोफिल्स की संख्या में वृद्धि	सामान्य मवाद उत्पन्न करने वाला संक्रमण, प्रदाह क्रिया का संकेत।
(ii) इओसिनोफिल्स की संख्या में वृद्धि	अतिसंवेदनशीलता या ऐलर्जी रोग तथा परजीवी संक्रमण होने का संकेत
(iii) बेसोफिल्स की संख्या में वृद्धि	चिकन पॉक्स रोग
(iv) लिम्फोसाइट्स की संख्या में वृद्धि	काली (कुकर) खांसी
(v) मोनोसाइट्स की संख्या में वृद्धि	क्षय (ट्यूबरकुलोसिस) रोग का संकेत
(vi) T_4 लिम्फोसाइट्स में अत्यधिक कमी	एड्स रोग का संकेत

(सामान्य विभेदक श्वेताणु गणना में T_4 लिम्फोसाइट्स की गणना नहीं की जाती है)

4. रक्ताणु अवसादन दर

(Erythrocyte Sedimentation Rate, ESR)

यदि प्रतिस्कंदक (Anticoagulant) जैसे ट्राइसोडियम साइट्रेट मिले हुए सम्पूर्ण रक्त (Whole blood) को किसी पात्र (ESR हेतु उपयोग में आने वाली कांच की मापन नलिका) में रखा जाता है तो रक्ताणु प्लैज्मा की तुलना में भारी होने के कारण नलिका के तल की तरफ बैठने (Settle) लगती हैं। रक्त के रक्ताणुओं के अवसादन (Settle) होने की दर को रक्ताणु अवसादन दर (ESR) कहते हैं। इसके मापन की दो विधियां प्रचलित हैं-

(i) वेस्टरग्रेन विधि (Westergren method)

(ii) विन्ट्रोब विधि (Wintrobe method)

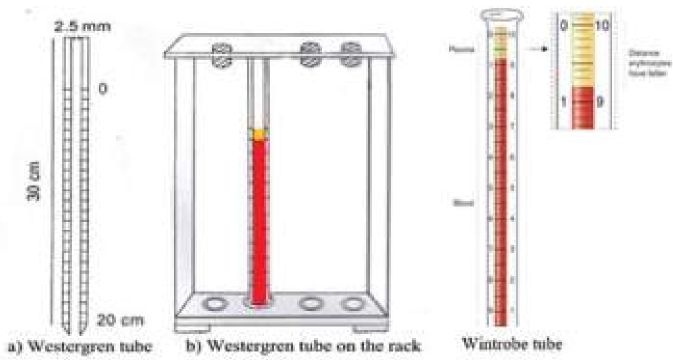

चित्र 42.2 : (अ) वेस्टरग्रेन नलिका, (ब) वेस्टरग्रेन नलिका-स्टेन्ड पर, (स) विन्ट्रोब नलिका

अधिकतर विकृतविज्ञान (Pathological) प्रयोगशालाओं में वेस्टरग्रेन विधि ही इस परीक्षण हेतु उपयोग में ली जाती है, अतः यहां इसी विधि का संक्षिप्त वर्णन दिया जा रहा है।

(अ) वेस्टरग्रेन नलिका को अनस्कन्दित रक्त के नमूने से "शून्य" के चिन्ह तक भरते हैं तथा उसे ऊर्ध्वाधर (Vertical) रूप में उचित तरीके से ई.एस. आर. स्टैण्ड में लगा देते हैं।

(ब) एक घण्टे के बाद रक्ताणुओं के ऊपरी स्तर का पाठ्यांक ले लेते हैं। यह रक्ताणु अवसादन दर का मान होता है।

स्वस्थ व्यक्ति के रक्त का ई.एस.आर. का मान निम्नानुसार होता हैं-

पुरुष = 0-16 मि. मी. प्रति घंटा

स्त्री = 0.20 मि.मी. प्रति घंटा

यदि ई. एस. आर. का मान सामान्य से अधिक होता है तो यह शरीर में किसी असामान्यता अर्थात् रोग का संकेत देता है। कई प्रकार की जीर्ण रोग अवस्थाओं (Chronic diseases) जैसे तपैदिक तथा प्रदाह क्रिया रोगों जैसे र्‍यूमेटॉइड आर्थ्राइटिस, मल्टीपल माइलोमा अथवा

अर्बुद, लसीकाभ अर्बुद इत्यादि में ई.एस.आर. का मान बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त ई.एस.आर. का मान गर्भकाल, रक्ताल्पता तथा आयु बढ़ने के साथ भी बढ़ता है।

ई.एस.आर. की अधिक यथार्थता (Accuracy) सुनिश्चित करने के उद्देश्य से आजकल ऑटोमेटेड मिनी ई.एस.आर. (Automated mini ESR) विधि द्वारा जांच की जाती है जिसमें $18^{\circ}C$ के नियंत्रित तापमान पर ई.एस.आर. मापा जाता है। पारंपरिक विधि में तापमान नियंत्रण न होने के कारण 25-30% त्रुटि की संभावना रहती है।

उपरोक्त के अतिरिक्त रक्त की अन्य विविध जांचें भी की जाती हैं जो कि शरीर के विभिन्न अंगों के कार्य तथा जैव रासायनिक व कार्यिकीय अवस्था के बारे में निदान हेतु उपयोगी है (तालिका 42.1)।

ऑटोऐनालाइजर (स्वचालित विश्लेषक)

आजकल रक्त के विभिन्न जैव रासायनिक तथा संरचनात्मक परिमापकों जैसे कुल इरिथ्रोसाइट गणना, श्वेताणु गणना, रक्ताणुओं का आकार, हीमोग्लोबिन की मात्रा, ग्लूकोस की मात्रा, यूरिया, कोलेस्टेरॉल, एन्जाइम्स, प्रोटीन्स इत्यादि की जांच हेतु कम्प्यूटर द्वारा नियंत्रित विकसित यंत्र उपलब्ध है जो कि ऑटोऐनालाइजर कहलाते हैं। इनसे एक ही समय में कई परिमापकों का विश्लेषण संभव है।

चिकित्सा विज्ञान में प्रयुक्त प्रमुख विधियाँ एवं उपकरण (Major Techniques and Instruments used in Medical Science)

1. इलेक्ट्रोकार्डियोग्राफी (Electrocardiography)

यह चिकित्सा विज्ञान की एक महत्वपूर्ण तकनीक है जिसके द्वारा हृदय की कार्यशील अवस्था (Functioning or beating heart) में तंत्रिकाओं तथा पेशियों द्वारा उत्पन्न विद्युतीय संकेतों (Electrical signals) का अध्ययन कर उनको रिकॉर्ड किया जाता है। इस कार्य में प्रयुक्त उपकरण इलेक्ट्रोकार्डियोग्राफ कहलाता है, तथा विद्युत संकेतों के ग्राफीकल रिकॉर्ड को इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम (Electrocardiogram, ECG) कहते हैं।

इस तकनीक में संचलन जैली (Conducting jelly) का प्रयोग करते हुए उपकरण के तीन इलेक्ट्रोड क्रमशः मरीज के वक्ष, कलाई तथा पैरों पर लगाये जाते हैं। इनसे प्राप्त विद्युत संकेत क्षीण प्रकृति (Low amplitude) के होते हैं, जिनको उपकरण में लगी उपयुक्त प्रणाली से अभिवृद्धित (Amplify) कर संवेदी चार्ट रिकॉर्डर में रिकॉर्ड कर लिया जाता है। आधुनिक तथा उन्नत किस्म के इलेक्ट्रोकार्डियोग्राफ में 12 या अधिक इलेक्ट्रोडों का उपयोग किया जाता है, जिन्हें 6 विभिन्न स्थानों पर लगा कर त्रिविमीय आरेख प्राप्त किया जा सकता है। इसे **वेक्टर कार्डियोग्राफी** (Vectorcardiography) कहते हैं।

ई.सी.जी. में हृदय के विभिन्न कक्षों या भागों के संकुचन तथा शिथिलन के समय होने वाली विद्युतीय गतिविधियों के संकेत एक निश्चित पैटर्न की तरंगों के रूप में प्राप्त होते हैं (चित्र 42.3) । इन तरंगों को P,Q,R,S एवं T तरंगें कहते हैं। प्रत्येक वर्ण (Letter) हृदय पेशियों में घटित एक विशिष्ट अवस्था का द्योतक हैं।

(अ)

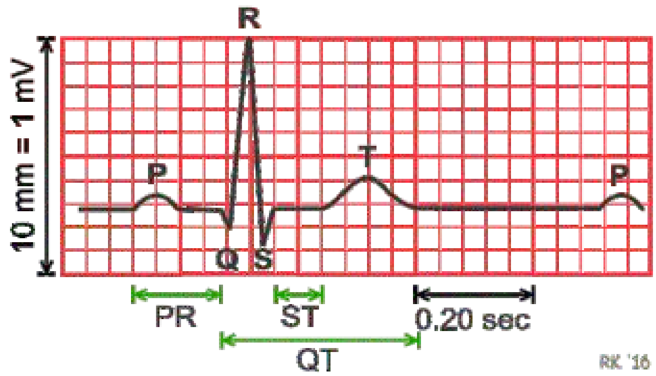

(ब)

चित्र 42.3 - (अ) आधुनिक ई.सी.जी. मशीन (ब) एक सामान्य ई.सी.जी.

इनके अध्ययन के द्वारा हृदय की असामान्यता के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। ई.सी.जी. से हृदय धमनी सम्बन्धी रोग (Coronary artery disease), हृदयघनाग्रता (कोरोनरी थ्रोम्बोसिस), हृदयावस्थीशूल

तालिका 42.1 रक्त सम्बन्धी प्रमुख जैव-रासायनिक परीक्षण तथा उनकी निदान में उपयोगिता

(Some Blood related Bio-chemical Examinations and their importance in diagnosis)

रक्त/प्लैज्मा/सीरम का पैरामीटर	उपयोगिता
1. रक्त शर्करा या रक्त ग्लूकोस (Blood Sugar or Blood Glucose)	सामान्य से अधिक- हाइपर ग्लाइसीमिया, मधुमेह रोग का संकेतक (Indicative of Diabetes mellitus)
2. सीरम कालेस्टेरॉल (Serum Cholesterol)	सामान्य से अधिक मात्रा- एथेरोस्क्लेरोसिस (Atherosclerosis), वृक्क सम्बंधी रोग, मधुमेह तथा मिक्सीडिमा(Myxedema) का संभावित संकेतक, सामान्य से कम मात्रा- संक्रमण, रक्ताल्पता, हाइपर-थाइरॉइडिज्म का सूचक।
3. सीरम लैक्टिक डिहाइड्रोजिनेस आइसोएन्जाइम्स की जांच (Ld_1, Ld_2, Ld_3, Ld_4, LD_5)	LD_1 व LD_2 की अधिकता- मायोकार्डियल इन्फारक्शन (Myocardial infaraction) का सूचक LD_4 व LD_5 की अधिकता- हिपेटाइटिस रोग का सूचक।
4. सीरम ग्लूटामिक-ऑक्सेलोऐसीटिक ट्रान्सऐमीनेस (=ऐस्पार्टेट ट्रान्सऐमीनेस, (SGOT or AST) एन्जाइम	सामान्य व अधिक मात्रा- मायोकार्डियल इन्फारक्शन तथा यकृत की असामान्यता का सूचक।
5. सीरम ग्लूटामिक पायरुविक ट्रान्सऐमीनेस अथवा ऐलेनिन ट्रान्सऐमीनेस (SGOT or ALT)	सामान्य स्तर से अत्यधिक बढ़ा हुआ मान- संक्रमण जनित हिपेटाइटिस, टॉक्सिक हिपेटाइटिस, परिसंचरणीय आघात (Circulatory shock) का सूचक।
6. रक्त यूरिया (Blood Urea)	सामान्य से अधिक मात्रा- नेफ्राइटिस (वृक्क सम्बंधी असामान्यता) का सूचक।
7. सीरम बिलीरूबिन (Serum Bilirubin)	सामान्य से अधिक मात्रा- रक्त अपघटनी पीलिया (Haemolytic jaundice) तथा पर्नीशियस रक्ताल्पता (Pernicious anaemia) का सूचक।
8. एलाइजा (ELISA) परीक्षण (ऐन्टीजन-ऐन्टीबॉडी प्रतिक्रिया पर आधारित)	संक्रामक रोगों जैसे एड्स, हिपेटाइटिस, रुबेला, थाइरॉइड अपसामान्यता तथा लैंगिक संचरित रोगों की जांच हेतु प्रयुक्त।
9. विडाल परीक्षण- सीरोलोजी	घनात्मक विडाल परीक्षण परिणाम टायफॉइड। (आन्त्रिक ज्वर) का सूचक।

(पेरीकार्डाइटिस), हृदयपेशीरुग्णता (कार्डियोमायोपेथी), मध्य हृदयपेशी शूल (मायोकार्डाइटिस) इत्यादि का निदान किया जाता है।

इकोकार्डियोग्राफी (Echocardiography)-इस युक्ति से अल्ट्रासाउण्ड तरंगों के प्रयोग द्वारा हृदय की संरचना के प्रतिबिम्ब (Image) प्राप्त कर सकते हैं।

डॉपलर इकोकार्डियोग्राफी (Doppler Echocardiography) - इस तकनीक द्वारा हृदय से गुजरने वाले रक्त प्रवाह के वेग (Velocity) को अप्रत्यक्ष रूप (Indirectly) में मापा जा सकता है।

2. इलेक्ट्रोएनसिफेलोग्राफी (Electroencephalography, EEG)

इलेक्ट्रोएनसिफेलोग्राफी तकनीक में मस्तिष्क के विभिन्न भागों की विद्युतीय क्रिया (Electrical activity) का मापन कर उनको आवर्धित रूप में रिकॉर्ड किया जाता हैं। **सैटन** (Satton) ने 1875 में सर्वप्रथम उद्भासित (Exposed) मस्तिष्क में विद्युतीय सक्रियता की खोज की। सन् 1929 में **हैंस बर्जर** (Hans Berger) ने मस्तिष्क की यथास्थिति (Intact brain) में भी सर्वप्रथम ऐसी विद्युतीय सक्रियता का रिकॉर्ड ट्रेस करने में सफलता प्राप्त की। मस्तिष्क की विद्युतीय सक्रियता में माइक्रोवोल्ट के स्तर की क्षणजीवी (Transient) तरंगें प्राप्त होती हैं, जिनको अधिक स्पष्ट व सुग्राही बनाने हेतु रिकॉर्ड करने से पूर्व उन्हें आवर्धित (Amplified) किया जाता है। इस प्रकार जो रिकॉर्ड प्राप्त होता है उसे **इलेक्ट्रोएनसिफेलोग्राम** (Electroencephalogram) कहते हैं।

इलेक्ट्रोएनसिफेलोग्राफी तकनीक दर्द रहित तथा किसी प्रकार

के अवांछित पार्श्व प्रभावों से मुक्त है। इसमें 16 से 30 छोटे-छोटे इलेक्ट्रोडों को शिरोवल्क (Scalp) के विभिन्न भागों पर लगाया जाता है। ये सभी इलेक्ट्रोड मुख्य यंत्र से जुड़े होते हैं। इलेक्ट्रोड मस्तिष्क के विभिन्न भागों के विद्युतीय संकेतों को मुख्य यंत्र तक पहुंचाते हैं जहां उनको रिकॉर्ड किया जाता है। इस कार्य में लगभग 45 मिनट का समय लगता है।

आजकल विकसित तकनीक के यंत्रों द्वारा मस्तिष्क के क्षीण चुम्बकीय क्षेत्रों (Weaker magnetic field) का भी अध्ययन सम्भव है। इस युक्ति को सुपर कन्डक्टिंग क्वान्टम इन्टरफेरेंस डिवाइस (Super Conducting Quantum Interference Device, SQUID) कहा जाता है।

मस्तिष्क के साथ-साथ मेरु रज्जु (Spinal cord) से सम्बन्धित असामान्यताओं का निदान **मैग्नेटोएनसिफेलोग्राफी** (Magnetoencephalography) द्वारा किया जा सकता है।

ई.ई.जी. का प्रारूप (Pattern) मरीज के मस्तिष्क की स्थिति व चेतना (Conciousness) का परिचित्रण (Reflection) करता है (चित्र 42.4) तथा मस्तिष्क सम्बंधी कई असामान्यताओं के निदान में सहायक है। इसके प्रमुख उपयोग निम्नलिखित हैं-

(i) ई.ई.जी. मस्तिष्क की संरचनात्मक असामान्यता से सम्बंधित रोगों जैसे मस्तिष्क के अर्बुद (Tumours), मिर्गी रोग (Epilepsy), एनसिफेलाइटिस (Encephalitis) आदि के निदान में सहायक है।

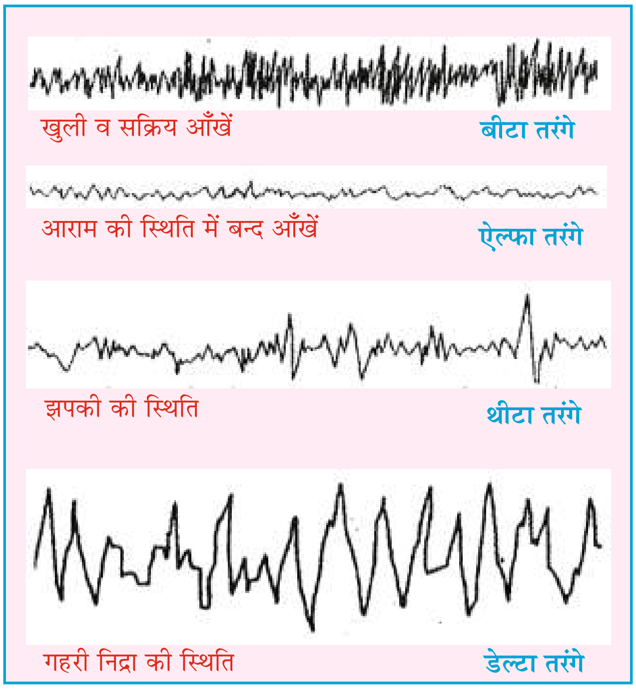

चित्र 42.4 विभिन्न स्थितियों में इलेक्ट्रोऐनसिफेलोग्राम

(ii) इसके द्वारा मस्तिष्क में संक्रमण (Infection), चयापचयी पदार्थों (Metabolities) तथा औषधियों का मस्तिष्क पर प्रभाव, निद्रा सम्बंधी गड़बड़ियां (Sleep disorders) आदि के निदान में सहायता मिलती है।

(iii) ई.ई.जी. मस्तिष्क मृत्यु (Brain death) के निर्धारण में उपयोगी है।

3. कम्प्यूटेड टोमोग्राफिक क्रमवीक्षण (Computed Tomographic Scan, CT scan)

यह चिकित्सा विज्ञान की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण तकनीक है जिसमें एक्स किरणों (X-rays) के प्रयोग को कम्प्यूटर तकनीकी के साथ संयोजित करते हुए शरीर के किसी भाग का द्विविमीय अथवा त्रिविमीय (Two or three dimensional) अनुप्रस्थ काट (Cross sectioned) का चित्र (Image) प्राप्त किया जा सकता है। इस चित्र में समस्त अंग अलग-अलग स्पष्ट दिखाई देते हैं। इस तकनीक का विकास ब्रिटेन के भौतिक विज्ञानी **गॉडफ्रे हॉन्सफील्ड** (Godfrey Hounsfield) द्वारा 1968 में किया गया। इन्हें इस खोज के लिये 1979 में नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया।

इस तकनीक के सैद्धान्तिक आधार की विवेचना एक भारतीय वैज्ञानिक श्री **गोपालसमुद्रम एन. रामचन्दन** (G.N. Ramchandran) ने प्रस्तुत की। सी.टी. स्कैन (जिसे कम्प्यूटेड एक्सियल टोमोग्राफी स्कैन, CAT Scan भी कहते हैं।) तकनीक में X- किरणों की अल्प मात्रा युक्त पुंज (Beam) 360^0 पर घूमती हुई मरीज के एक पतले क्रॉस सैक्शन जैसे भाग से गुजरती है। इस समय ऊतक अपने घनत्व (Density) के अनुरूप विकिरण की कुछ मात्रा का अवशोषण कर लेते हैं। यह विकिरण पुंज शरीर से बाहर आने पर प्रकाश संवेदी क्रिस्टल संसूचक (Detector) द्वारा इलैक्ट्रोनिक संकेतों (Electronic signals) में बदल जाता है जिसे कम्प्यूटर क्रमवीक्षक (Computer scanner) को संप्रेषित (Transmitted) कर दिया जाता है। यह प्रकिया तब तक पुनरावृत होती है जब तक कि शरीर की काट के किसी स्तर को सभी कोणों से नहीं प्रेक्षित कर लिया जाये। इन आंकड़ों का कम्प्यूटर द्वारा विश्लेषण किया जाता है। इस परीक्षण में थोड़ी-थोड़ी दूरी की क्रॉस काटों के स्तरों पर चित्रों की एक श्रृंखला प्राप्त हो जाती है, अत: ये क्रमवीक्षण (Scan) कहलाते हैं।

सी.टी. स्कैन का उपयोग शरीर के किसी भी हिस्से का चित्र प्राप्त करने में कर सकते हैं। यह तकनीक मस्तिष्क, मेरुरज्जु, छाती, उदर इत्यादि से संबंधित रोगों के निदान में सहायक सिद्ध होती है। इस परीक्षण से अर्बुदों (Tumours) की जांच तथा आस-पास के ऊतकों में उनके प्रसार के बारे में अत्यधिक उपयोगी जानकारी प्राप्त होती है।

4. मैग्रेटिक रेजोनेन्स ईमेजिंग
(Magnetic Resonance Imaging, MRI)

एम.आर.आई तकनीक की खोज का श्रेय **फेलिक्स ब्लॉक** (Felix Bloch) एवं **एडवर्ड एम. परसेल** (Edward M. Purcell) को जाता है, जिन्हें इसके लिये 1952 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। चिकित्सा विज्ञान में इसका उपयोग **रेमण्ड दैमेडियन** (Raymond Damadian) द्वारा प्रारम्भ किया गया। यह सी.टी. स्कैन से भी अधिक श्रेष्ठ तथा निरापद परीक्षण तकनीक है जिसमें मरीज को किसी भी तरह के आयनकारी विकिरणों जैसे X- किरणों से उद्भासित नहीं किया जाता है। इस विधि से अंगों या ऊतकों के अत्यधिक स्पष्ट त्रिविमीय चित्र प्राप्त होते हैं। एम.आर.आई. तकनीक नाभिकीय मैग्नेटिक रेजोनेन्स के सिद्धान्त पर कार्य करती है। इसमें अत्यधिक प्रबल चुम्बकीय क्षेत्र तथा रेडियो तरंगों के वातावरण में उत्पन्न हाइड्रोजन परमाणुओं के केन्द्रकों (Nuclei) के विद्युत आवेश व लघु चुम्बकीय गुणों को उपयोग में लाया जाता है। शरीर में प्रोटोन्स के स्रोत के रूप में हाइड्रोजन परमाणुओं का उपयोग होता है जो कि जल के अणुओं में पाये जाते हैं। एम.आर.आई. परीक्षण में मरीज को लगभग दो मीटर चौड़े कक्ष में लिटा दिया जाता है। यह कक्ष एक विशाल एवं बेलनाकार विद्युत चुम्बकों से घिरा रहता है जो कि अल्प समयावधि में शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्र तथा तरंगें उत्पन्न करता है। इस चुम्बकीय प्रभाव के कारण मरीज के ऊतकों के हाइड्रोजन केन्द्रक (प्रोटोन्स) सक्रिय होकर रेडियो संकेत उत्पन्न करते हैं। इन संकेतों को कम्प्यूटर द्वारा ग्रहण कर विश्लेषित किया जाता है व इनसे मरीज के शरीर की एक पतली काट के संगत चित्र प्राप्त किये जाते हैं। एम.आर.आई. से प्राप्त चित्र सी.टी. स्कैन की तुलना में अधिक उत्कृष्ट तथा स्पष्ट विभेदन (Contrast) दर्शाने वाले होते हैं। इससे किसी भी तल में चित्र प्राप्त किये जाने संभव है। यद्यपि एम.आर.आई. एक मंहगी परीक्षण तकनीक है किन्तु यह मस्तिष्क तथा मेरुरज्जु की जांच व अध्ययन के लिये अति उपयोगी है। इससे श्वेत द्रव्य तथा धूसर द्रव्य में भी स्पष्ट विभेदन किया जा सकता है।

चित्र 42.5 एम.आर.आई. मशीन

5. अल्ट्रासाउन्ड (पराध्वनि) स्कैनिंग
(Ultrasound Scanning)

इस तकनीक को **इकोग्राफी** या **सोनोग्राफी** (Echography or Sonography) भी कहा जाता है। सोनोग्राफी में ट्रान्सड्यूसर नामक एक युक्ति में उपस्थित लैड जिर्कोनेट (Lead zirconate) नामक पदार्थ के क्रिस्टल रखे होते हैं। इन क्रिस्टलों पर विद्युत विभव (Electric potential) प्रयुक्त करने पर पीजोइलैक्ट्रिक प्रभाव (Piezoelectric effect) द्वारा अति उच्च आवृत्ति (High frequency) की ध्वनि तरंगें उत्पन्न होती हैं। ये तरंगें मनुष्य की श्रव्य परास से परे होती हैं। इन तरंगों को पराध्वनि (Ultrasound) कहते हैं। इनकी आवृत्ति 20 KHz से भी अधिक होती है।

जब पराध्वनि को मनुष्य के शरीर में ऊतकों एवं अंगों पर डाला जाता है तो वे उनसे टकराकर वापिस आ जाती हैं व प्रतिध्वनियों (Echoes) की एक श्रृंखला की तरह ट्रान्सड्यूसर द्वारा ही ग्रहण कर ली जाती है। यह ट्रान्सड्यूसर इनको विद्युत संकेतों में बदल देता है जिनको एक मोनीटर द्वारा पर्दे पर प्रदर्शित किया जाता है। यह एक द्विविमीय चित्रों के रूप में दिखाई देते हैं।

चित्र 42.6 सोनाग्राफी मशीन

सोनोग्राफी के द्वारा पर्दे पर प्रदर्शित प्रतिबिम्बों को फोटो के रूप में प्राप्त कर सकते हैं। इसे **सोनोग्राम** (Sonogram) कहा जाता है। सोनोग्राम द्वारा किसी अंग/ऊतक की स्थिति, आकृति, आकार तथा गठन (Texture) का पता लगाया जा सकता है।

सोनोग्राफी तकनीक रेडियोग्राफी की तुलना में सस्ती तथा आरामदायक होती है व इसके अनेक उपयोग हैं। यह गर्भस्थ शिशु की वृद्धि ज्ञात करने व उसकी असामान्यताओं का पता लगाने में सहायक है। सोनोग्राफी द्वारा गुर्दे तथा पित्ताशय की पथरी, आंत्रीय अवरोध (Obstruction in intestine), गर्भाशय, फैलोपियन नलिकाओं आदि की असामान्यताओं का पता लगाया जाता है। इसका उपयोग प्रमुख रूप से प्रसव एवं प्रसूति सम्बंधी कठिनाइयों के निदान में किया जाता है। एक धड़कते हृदय की सोनोग्राफी में डॉपलर प्रभाव के इस्तेमाल से रक्त प्रवाह की तस्वीर भी प्राप्त की जा सकती हैं।

6. रेडियो प्रतिरक्षी आमापन
(Radio-Immuno Assay, RIA)

रेडियो इम्यूनो ऐसे (रेडियो प्रतिरक्षी आमापन) एक विश्लेषणात्मक विधि है, जिसका प्रयोग बहुत पहले से किया जाता रहा है। इस विधि में विश्लेषित किये जाने वाले पदार्थ (जोकि ऐन्टीजन की तरह कार्य करता है) के कुछ अंशों को रेडियोधर्मी पदार्थ से चिन्हित (Marked or Labelled) कर दिया जाता है तथा सामान्य एवं चिन्हित ऐन्टीजन अणुओं की ऐन्टीबॉडीज (प्रतिरक्षियों) के साथ क्रिया का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। इस विधि में रेडियो आइसोटोप पदार्थ का उपयोग सूचक के रूप में होता है।

रोसेलिन व येलो (Rosalyn and Yalow) द्वारा खोजी गई यह विधि चिकित्सा विज्ञान में एक महत्वपूर्ण निदानात्मक तकनीक है। यह विशेषकर ऐसे जैवरासायनिक घटकों के विश्लेषण में उपयोगी है जो शरीर में अति सूक्ष्म मात्रा (माइक्रोग्राम, नैनोग्राम या पीकोग्राम के स्तर पर) में विद्यमान होते हैं व इनका विश्लेषण पारम्परिक भारमितीय (Gravimetric) एवं आयतनी (Volumetric) विधियों द्वारा संभव नहीं है। रेडियो इम्यूनी ऐसे में प्रयुक्त रेडियो आइसोटोप उच्च विशिष्टता (High specificity) युक्त पदार्थ होते हैं जिसके फलस्वरूप यह तकनीक उच्च सुग्राहिता (Sensitivity) प्रदर्शित करती है।

इस विधि में विश्लेषण किये जाने वाले पदार्थ के सामान्य अणुओं की भिन्न भिन्न सान्द्रताओं के मानक विलयनों (Standard solutions) को समान सान्द्रताओं वाले चिन्हित (Labelled) पदार्थ युक्त विलयनों के साथ प्रयोग करते हैं तथा प्रतिरक्षियों के साथ क्रिया कराते हैं। साम्यावस्था (Equilibrium) प्राप्त होने पर प्रतिजन-प्रतिरक्षी सम्मिश्र (Antigen-antibody complex) को उपयुक्त अभिकर्मकों द्वारा अवशोषित कर लेते हैं। अवक्षेपित तथा प्लावी (Supernatant) भागों को पृथक कर उनकी रेडियोधर्मिता के मापन के द्वारा पदार्थ की सही मात्रा को ज्ञात कर लिया लाता है।

रेडियो प्रतिरक्षी विश्लेषण की एक प्रमुख विशेषता यह है कि मरीज को किसी प्रकार के हानिकारक प्रभाव की आशंका नहीं होती तथा मरीज को रेडियो आइसोटोप पदार्थ से उपचारित करने की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि समस्त क्रिया शरीर के बाहर सम्पन्न होती है। रेडियो इम्यूनो ऐसे के प्रमुख उपयोग निम्नलिखित हैं-

(i) इस विधि के द्वारा महत्वपूर्ण जैविक घटकों जैसे विटामिन (B^{12} फोलिक ऐसिड), हॉर्मोन्स (थायरोक्सिन, ट्राइआयोडोथाइरोनिन T_3, कॉर्टिसोल, टेस्टोस्टेरोन, ऐस्ट्रोजन्स, ट्रॉपिक हॉर्मोन्स इत्यादि); औषधियाँ (डिजॉक्सिन, डिजीटोक्सिन इत्यादि) तथा ऐन्टीजन पदार्थ जैसे ऑस्टेलिया ऐन्टीजन की मात्रा ज्ञात कर सकते हैं।

(ii) अन्तःस्रावी तंत्र के विकारों के निदान में रेडियो इम्यूनो ऐसे अत्यन्त महत्वपूर्ण तकनीक सिद्ध हुई हैं। उदाहरणार्थ किसी विशिष्ट हॉर्मोन की रक्त में अधिकता, उसको स्रावित करने वाली अन्तःस्रावी ग्रन्थि की अतिसक्रियता का परिणाम है अथवा यह ट्रॉपिक हॉर्मोन के प्रभाव के कारण है। ऐसे प्रश्नों का समाधान इस तकनीक द्वारा संभव है।

(iii) इस विधि द्वारा इन्सुलिनोमा, लैंगिक हॉर्मोन सुग्राही, अर्बुद इत्यादि का निदान संभव है जिससे उनके उचित इलाज में सहायता मिलती है।

उपरोक्त जैव- चिकित्सा तकनीकों के अतिरिक्त भी अनेक चिकित्सकीय तकनीकें तथा विधियाँ उपलब्ध हैं। इन सभी का वर्णन यहां पर सम्भव नहीं है क्योंकि ये निर्धारित पाठ्यक्रम की परिधि से परे है। फिर भी पाठकों की जानकारी के लिये यहां इन तकनीकों के केवल नाम दिये जा रहे हैं-

1. एक्स-रे रेडियोग्राफी (X-Ray Radiography),
2. एन्जियोग्राफी (Angiography),
3. पॉजिस्ट्रॉन उत्सर्जन टोमोग्राफी (Positron Emission Tomography),
4. पॉलीग्राफी (Polygraphy),
5. अन्तदर्शी प्रक्रिया (Endoscopy)
6. लेजर सूक्ष्म शल्य क्रिया (Laser Microsurgery),
7. ऊतक/अंग प्रत्यारोपण (Tissue/Organ Transplantation),
8. हीमोडायलायसि (Haemodialysis)
9. प्रोस्थेसिस (Prosthesis)
10. प्रतिस्थापना शल्य चिकित्सा (Replacement surgery),

11. क्रायो शल्य चिकित्या (Cryosurgery)
12. जीन उपचार (Gene Theraphy)

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में विभिन्न रोगों के निदान में कई प्रकार की विकसित तकनीकों का प्रयोग किया जाता है।
2. रक्त जांच द्वारा शारीरिक व कार्यिकीय अवस्था तथा असामान्यता का पता लगाया जा सकता है।
3. रक्त में उपस्थित हीमोग्लोबिन का मापन हीमोग्लोबिनोमीटर द्वारा किया जाता है। सामान्य मात्रा से कम हीमोग्लोबिन की मात्रा रक्ताल्पता रोग की सूचक है।
4. रक्त कोशिकाओं (रक्त में कुल श्वेताणुओं) की गणना न्यूबॉर हीमोसाइटोमीटर द्वारा की जाती है।
5. विभेदक श्वेताणु गणना (DLC) द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार के श्वेताणुओं की प्रतिशत संख्या की गणना की जाती है।
6. रक्ताणुओं (RBCs) के अवसादन होने की दर रक्ताणु अवसादन दर (ESR) कहलाती है। इसे वेस्टरग्रेन तथा विन्ट्रोब विधि द्वारा ज्ञात करते हैं।
7. इलेक्ट्रोकार्डियोग्राफी (ECG) द्वारा हृदय की कार्यशील अवस्था में तंत्रिकाओं तथा पेशियों द्वारा उत्पन्न विद्युतीय संकेतों को रिकॉर्ड किया जाता है। इसके द्वारा हृदय संबंधी रोगों का निदान किया जाता है।
8. इलेक्ट्रोएनसिफेलोग्राफी (EEG) द्वारा मस्तिष्क के विभिन्न भागों की विद्युतीय क्रिया का मापन कर, रिकार्ड किया जाता है। यह मस्तिष्क सम्बंधी असामान्यताओं के निदान में सहायक है।
9. कम्प्यूटेड टोमोग्राफिक क्रमवीक्षण (CT Scan) में X- किरणों एवं कम्प्यूटर तकनीकी को संयोजित करते हुए शरीर के किसी भाग का द्विविमीय या त्रिविमीय अनुप्रस्थ काट चित्रित किया जा सकता है। यह मस्तिष्क, मेरुरज्जु, छाती, उदर इत्यादि से सम्बंधित रोगों के निदान में सहायक होती है।
10. मैग्नेटिक रेजोनेन्स इमेजिंग (MRI) सी.टी. स्कैन से अधिक श्रेष्ठ तथा निरापद तकनीक है जिसमें मरीज को आयनकारी विकिरणों का खतरा नहीं होता है। इस तकनीक से किसी भी तल में स्पष्ट व उत्कृष्ट चित्र प्राप्त हो सकते हैं। मस्तिष्क तथा मेरुरज्जु की जांच में यह विधि काफी उपयोगी है।
11. पराध्वनि स्कैनिक (सोनोग्राफी या अल्ट्रासाउण्ड स्कैनिंग) में अत्यधिक उच्च आवृति की ध्वनि तरंगों को प्रयुक्त कर उनकी शरीर ऊतकों द्वारा परावर्तित प्रतिध्वनियों को विद्युतीय संकेतों में बदलकर शरीर के अंगों का द्विविमीय चित्र प्राप्त करते हैं। यह प्रसव व प्रसूति संबंधी गड़बड़ियों तथा गर्भस्थ शिशु की जांच में अधिक उपयोगी है।
12. रेडियो इम्यूनो ऐसे (RIA) तकनीक में रेडियो सक्रिय आइसोटोप पदार्थों का उपयोग सूचक के रूप में करते हुए ऐन्टीजन-ऐन्टीबॉडी प्रतिक्रिया के सिद्धान्त पर किसी महत्वपूर्ण जैव रासायनिक घटक की अति सूक्ष्म मात्रा का मापन किया जा सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुवैकल्पिक प्रश्न

1. रक्त में उपस्थित हीमोग्लोबिन का मापन किससे किया जाता है-
   (अ) हीमोसाइटोमीटर (ब) हीमोग्लोबिनोमीटर
   (स) वेस्टरग्रेन विधि (द) विन्ट्रोब विधि
2. किस रोग में श्वेताणुओं की संख्या बढ़ जाती है-
   (अ) तपैदिक (ब) टायफॉइड
   (स) खसरा (द) रक्त कैंसर
3. हृदय सम्बंधी रोगों का निदान किसके द्वारा किया जाता है-
   (अ) ई.ई.जी. (ब) ई.सी.जी.
   (स) आर.आई.ए. (द) सी.ए.टी स्कैन
4. सी.टी स्कैन में किन विकिरणों का प्रयोग होता है-
   (अ) α - किरणों का (ब) β - किरणों का
   (स) γ - किरणों का (द) x- किरणों का
5. एम.आर.आई. का पूरा नाम है-
   (अ) मल्टीपल रेजोनेंस इमेजिंग
   (ब) मैग्नेटिक रेडियो इमेजिंग
   (स) मैग्नेटिक रेजोनेंस इमेजिंग
   (द) मल्टीपल रेडियो इमेजिंग

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. कुल श्वेताणु गणना (टी.एल.सी.) किसके द्वारा की जाती है?
2. ल्यूकोसाइटोसिस क्या है?
3. ई.एस.आर. का मान किन रोगों में बढ़ जाता है?
4. हृदय स्पदंन को रिकॉर्ड करने वाले यंत्र का नाम लिखिये।
5. ई.ई.जी. शरीर के किस अंग के निदान से संबंधित है?
6. एम.आर.आई. में X- किरणों के स्थान पर किसका प्रयोग किया जाता है?

7. सोनोग्राफी में किसके क्रिस्टल प्रयुक्त होते हैं?
8. आर.आई.ए. में सूचक का कार्य कौन करता है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. ई. एस. आर. ज्ञात करने की वेस्टरग्रेन विधि का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
2. विभेदक श्वेताणु गणना (डी.एल.सी.) का चिकित्सकीय महत्व क्या है?
3. ई.सी.जी. के उपयोग लिखिये।
4. सोनोग्राफी तकनीक का महत्व लिखिए।
5. ई.एस.आर. का रोग निदान में महत्व स्पष्ट कीजिए।
6. एम.आर.आई. तकनीक सी.टी.स्कैन से अधिक श्रेष्ठ व निरापद क्यों हैं?

निबंधात्मक प्रश्न

1. रक्त में हीमोग्लोबिन मापन का सविस्तार वर्णन कीजिए।
2. ई.ई.जी. को सचित्र स्पष्ट करते हुए इसके उपयोग दीजिए।
3. एम.आर.आई. पर निबंधात्मक टिप्पणी लिखिए।
4. आर.आई.ए. क्या है? इसकी कार्यप्रणाली व उपयोगों का संक्षिप्त वर्णन दीजिए।

उत्तरमाला

1. (ब) 2. (द) 3. (ब) 4. (द) 5. (स)

❑❑❑